शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जनवरी 2018
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

नाम साधना में जप तत्व

अनूप शर्मा
शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय
उज्जैन, मध्यप्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

जीवन में सुख शान्ति और समृद्धि प्राप्त करने में नाम स्मरण का महत्व असंदिग्ध है। मनुष्य के आंतरिक विकास के लिए सभी धर्मों में नाम और जप का बारम्बार उल्लेख किया गया है। मंत्र को दोहराने के साथ उसके अर्थ की भावना से चित्त शुद्धि में सहायता मिलती है। प्रस्तुत शोध पत्र में नाम साधना में जप तत्व के महत्व पर विचार किया गया है।

जप का महत्व

आध्यात्मिक साधकों के लिए एवं सामान्य मनुष्यों के लिए जप एक महत्वपूर्ण साधन पद्धति है। 'जप जल्प व्यक्तयां। वाचि जल्पनं बारम्बार उच्चरणं' बार-बार उच्चारण1 का अर्थ है जप। जप में किसी नाम अथवा मंत्र को उसके अर्थ की भावना करते हुए दोहराया जाता है। स्फुट वाणी से कुछ नहीं कहा जाता। इसकी एक और परिभाषा है 'निवधि अन्तःकरण प्रकाश'- यह सूक्ष्म करूणाद्, अंतःकरण की विशुद्ध दीप्ति है। इस स्थिति में सारे बंधन छिन्न हो जाते हैं।

जप के तीन प्रकार माने गए हैं । (1) वाचिक, (2) उपांशु, (3) मानस। बोलकर जप करना वाचिक है। उपांशु जप में केवल होंठ हिलाते हैं और मानस जप अन्तःकरण में होता है। तीसरे प्रकार का जप श्रेष्ठ माना जाता है, क्योंकि मंत्र का अथवा नाम का मन में उच्चारण करने से काम के संकल्प-विकल्प नष्ट होते हैं। मन को लगाम देने की और परमात्मा की ओर ले जाने की यह अद्भुत प्रणाली है। गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने हमें विश्वास दिलाया है कि जप साधक का महान भय से त्राण करता है 'प्रयते महतो भयात्। मनु अधिकारपूर्वक घोषित करते हैं कि जप से भीतर परम ब्रह्ममय हो जाता है। विवेक और कार्य करने की शक्ति मनुष्य को दूसरे प्राणियों से पृथक कर श्रेष्ठ प्राणी का पद प्रदान करती है। उसे ज्ञात हो जाता है। जीवन साधना के लिए है, रूदन के लिये नहीं।

प्रमुख धर्मों में जप

संसार के प्रायः सभी मुख्य धर्मों में जप की परम्परा है। जो धर्म जितने गहरे और गंभीर हैं उन्होंने जप की महत्ता को स्वीकार किया है। आस्तिक रोमन कैथोलिक माला का व्यवहार करते हैं। इस्लाम धर्म में भी तस्बीह रखते हैं और जप करते हैं। बौद्धधर्म में भी जपसाधना का एक महत्वपूर्ण अंग है। सिक्ख धर्म का मूल आधार ही गुरूवाणी है। वाणी शब्द का गंभीर अर्थ है। वाक्नयति जो अन्तः शब्द को प्रसारित करती हैं वह वाणी है। इससे चित्त की वृत्तियों को एकाग्र कर ध्येय-वस्तु पर ठहराने में बहुत मदद मिलती है। जब सामान्य व्यक्ति का मन जगत में भटकता रहता है और उसे अत्यन्त बेचैन रखता है तब जप करने से चित्त में एकाग्रता आती है। इस प्रक्रिया में साधक को कई

विघ्न आते हैं। उसके चित्त रूपी पर्दे पर जगत के दृश्य, स्मृतियाँ बहुत तेजी से आने लगती हैं किन्तु सावधानी, लगनशीलता अभ्यास में वह लगा रहता है। धीरे-धीरे समस्त दृश्यों का शमन होने लगता है और मन सुषुम्ना के साथ उर्ध्वगति की ओर यात्रा तय करने लगता है। मन की ऐसी आस्था को लक्ष्य में रखते हुए अर्जुन ने भगवान श्रीकृष्ण से कहा है :

'चंचल हि मनः कृष्णः प्रमाथि बलवददृढ़म् ।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोखि सुदुष्कर।।

हे कृष्ण ! यह मन बड़ा चंचल स्वभाव वाला है। बड़ा, दृढ़ और बलवान है इसीलिए इसको वश में करना, वायु को वश में करने की भाँति दुष्कर है। इस दुष्कर कार्य को जप के द्वारा परमेश्वर में लगाया जाता है, आंतरिक जप की श्रेष्ठता को बताते हुए गोपीनाथ कविराज ने लिखा है कि आंतरिक जप से कर्ता के रूप में अहं भाव अक्षुण्ण रहता है और वह भी धीरे-धीरे समाप्त हो जाता है। जब ऐसी अवस्था का उदय होता है तो कंठ रोध हो जाता हैं प्रयत्न द्वारा जप करना फिर नहीं बनता। कर्मकारिणी नाड़ियां कुछ अंश में निरूद्ध हो जाती हैं। जब यह अपने आप ही भीतर ही भीतर चलता रहता है। इसका नाम जप होता हैं। इसके तीन भेद हैं पहले भेद में हृदय में जप होता है। दूसरे में नाभि में और अंत में मूलाधार में होता है। हृदय जप को ही मध्यमा मार्ग में प्रवेश मानना चाहिये। यही नाद की प्रकटावस्था है और वह नाद रूप में परिणित होकर परमेश्वर की ओर बढ़ने लगता है। डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत ने इस अजपाजप की स्थिति इस प्रकार मानी है, "उनके अनुसार प्राण और अपान वायु के संबंध में प्रसिद्ध है कि ऊपर और नीचे स्थित रहती है और वे नाभि स्थल में मिलती है। इसीलिये योगी नाभि को केन्द्र बिन्दु मानते हैं। योगी प्राण के द्वारा अपान को आकृष्ट कर नाभि प्रदेश में मिला देते हैं। इसी प्रकार अपान प्राण को आकृष्ट करती है। एक-दूसरे को आकृष्ट कर योगी नाभि प्रदेश में एक-दूसरे को मिलाते हैं। प्राण अपान के आकृष्ट और अनाकृष्ट करने की प्रक्रिया स्वयं ही चलती रहती है। हंस मंत्र का उच्चारण अपने आप चलता रहता है। दिन रात में 21600 बार इस मंत्र की आवृत्ति स्वयमेव होती रहती है। अज्ञानवश जीव मंत्र के महत्व को नहीं समझता लेकिन जप मंत्र रूप में इस प्रक्रिया को ग्रहण कर लेता है तो इसी का नाम अजपा-जप हो जाता है।"3

निष्कर्ष

अतः नाम जप से जीव जगत के बाह्य दृश्यों से मुक्ति पाकर परब्रह्म के चिंतन में लीन होने लगता है। चित्त को सूक्ष्मता प्राप्त होती है। नाड़ी शोधन होता है और शुद्ध चित्त में परमात्मा का दर्शन ऐसे ही होता है जैसे हाथ पर रखा हुआ आँवला। अतः परमात्मा प्राप्ति का यह महत्वपूर्ण साधन है। ऐसा ही नाम जप लाभ करता है, जो अर्थ की भावना के साथ हो और अपने लक्ष्य की ओर उन्मुख हो।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. तांत्रिकवाड्मय में शाक्त दृष्टि गोपीनाथ कविराज, 245

2. गीता: अध्याय 6, श्लोक 34

3. हिन्दी की निर्गुण काव्यधारा तथा उसकी दार्शनिक पृष्ठभूमि गोविन्द त्रिगुणायत पृष्ठ 497